रामचन्द्र शुक्ल का हिन्दी साहित्य में स्थान

प्रो. रश्मि कुमार
हिंदी और आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय,लखनऊ

संक्षिप्त सार

रामचन्द्र शुक्ल का जन्म 1884 ईस्वी में उत्तर प्रदेश बस्ती जिले के अगोना नामक गाँव में हुआ था। इनकी माता जी का नाम विभाषी था और पिता चंद्रबली शुक्ल की नियुक्ति सदर कानूनगो के पद पर मिर्जापुर में हुई तो समस्त परिवार वहीं आकर रहने लगा। जिस समय शुक्ल की अवस्था नौ वर्ष की थी, उनकी माता का देहान्त हो गया।,आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (4 अक्टूबर 1884 – 2 फरवरी 1941) हिन्दी आलोचक, कहानीकार, निबन्धकार, साहित्येतिहासकार, कोशकार, अनुवादक, कथाकार और कवि थे।भाषा का सरल और व्यवहारिक रूप शुक्ल जी के मनोवैज्ञानिक निबंधों में मिलता है। इसमें हिंदी के प्रचलित शब्दों को ही अधिक ग्रहण किया गया है यथा स्थान उर्दू और अंग्रेजी के अतिप्रचलित शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। भाषा को अधिक सरल और व्यवहारिक बनाने के लिए शुक्ल ने तड़क–भड़क अटकल–पच्चू आदि ग्रामीण बोलचाल के शब्दों को भी अपनाया है। तथा नौ दिन चले अढ़ाई कोस, जिसकी लाठी उसकी भैंस, पेट फूलना, काटों पर चलना आदि कहावतों व मुहावरों का भी प्रयोग निस्संकोच होकर किया है।शुक्ल जी का दोनों प्रकार की भाषा पर पूर्ण अधिकार था। वह अत्यंत संभत, परिमार्जित, प्रौढ़ और व्याकरण की दृष्टि से पूर्ण निर्दोष है। उसमें रंचमात्र भी शिथिलता नहीं। शब्द मोतियों की भांति वाक्यों के सूत्र में गुंथे हुए हैं। एक भी शब्द निरर्थक नहीं, प्रत्येक शब्द का अपना पूर्ण महत्व है।

शब्द संकेत : *रामचन्द्र शुक्ल, कहानीकार, निबन्धकार, साहित्येतिहासकार, कोशकार, परिमार्जित*

---

१. विषय प्रवेश

रामचन्द्र शुक्ल का जन्म 1884 ईस्वी में उत्तर प्रदेश बस्ती जिले के अगोना नामक गाँव में हुआ था। इनकी माता जी का नाम विभाषी था और पिता चंद्रबली शुक्ल की नियुक्ति सदर कानूनगो के पद पर मिर्जापुर में हुई तो समस्त परिवार वहीं आकर रहने लगा। जिस समय शुक्ल की अवस्था नौ वर्ष की थी, उनकी माता का देहान्त हो गया। मातृसुख के अभाव के साथ–साथ विमाता से मिलने वाले दुःख ने उनके व्यक्तित्व को अल्पायु में ही परिपक्व बना दिया।अध्ययन के प्रति लग्नशीलता शुक्ल में बाल्यकाल से ही थी। किंतु इसके लिए उन्हें अनुकूल वातावरण न मिल सका। मिर्जापुर के लंदन मिशन स्कूल से 1901 में स्कूल फाइनल परीक्षा उत्तीर्ण की। उनके पिता की इच्छा थी कि शुक्ल कचहरी में जाकर दफ्तर का काम सीखें, किंतु शुक्ल उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते थे। पिता जी ने उन्हें वकालत पढ़ने के लिए इलाहाबाद भेजा पर उनकी रुचि वकालत में न होकर साहित्य में थी। अतः परिणाम यह हुआ कि वे उसमें अनुत्तीर्ण रहे। शुक्ल जी के पिताजी ने उन्हें नायब तहसीलदारी

की जगह दिलाने का प्रयास किया, किंतु उनकी स्वाभिमानी प्रकृति के कारण यह संभव न हो सका।,आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (4 अक्टूबर 1884 – 2 फरवरी 1941) हिन्दी आलोचक, कहानीकार, निबन्धकार, साहित्येतिहासकार, कोशकार, अनुवादक, कथाकार और कवि थे। उनके द्वारा लिखी गई सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पुस्तक है हिन्दी साहित्य का इतिहास, जिसके द्वारा आज भी काल निर्धारण एवं पाठ्यक्रम निर्माण में सहायता ली जाती है। हिन्दी में पाठ आधारित वैज्ञानिक आलोचना का सूत्रपात भी उन्हीं के द्वारा हुआ। हिन्दी निबन्ध के क्षेत्र में भी शुक्ल का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भाव, मनोविकार सम्बन्धित मनोविश्लेषणात्मक निबन्ध उनके प्रमुख हस्ताक्षर हैं। शुक्ल ने साहित्य के इतिहास लेखन में रचनाकार के जीवन और पाठ को समान महत्त्व दिया। उन्होंने प्रासंगिकता के दृ ष्टिकोण से साहित्यिक प्रत्ययों एवं रस आदि की पुनर्व्याख्या की।

1903 से 1908 तक आनन्द कादम्बिनी के सहायक संपादक का कार्य किया। 1904 से 1908 तक लंदन मिशन स्कूल में ड्राइंग के अध्यापक रहे। इसी समय से उनके लेख पत्र–पत्रिकाओं में छपने लगे और धीरे–धीरे उनकी विद्वता का यश चारों ओर फैल गया। उनकी योग्यता से प्रभावित होकर 1908 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने उन्हें हिन्दी शब्दसागर के सहायक संपादक का कार्य–भार सौंपा जिसे उन्होंने सफलतापूर्वक पूरा किया। श्यामसुन्दर दास के शब्दों में शब्दसागर की उपयोगिता और सर्वांगपूर्णता का अधिकांश श्रेय रामचंद्र शुक्ल को प्राप्त है। वे नागरी प्रचारिणी पत्रिका के भी संपादक रहे। 1919 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिंदी के प्राध्यापक नियुक्त हुए जहाँ श्यामसुंदर दास की मृत्यु के बाद 1937 से जीवन के अंतिम काल 1941 तक विभागाध्यक्ष के पद पर रहे।

२. मौलिक कृतियाँ तीन प्रकार

२.१ *आलोचनात्मक ग्रंथ*

सूर, तुलसी, जायसी पर की गई आलोचनाएँ, काव्य में रहस्यवाद, काव्य में अभिव्यंजनावाद, रसमीमांसा आदि शुक्ल की आलोचनात्मक रचनाएँ हैं।

२.२ *निबन्धात्मक ग्रन्थ*

उनके निबन्ध चिंतामणि नामक ग्रंथ के दो भागों में संग्रहीत हैं। चिंतामणि के निबन्धों के अतिरिक्त शुक्ल ने कुछ अन्य निबन्ध भी लिखे हैं, जिनमें मित्रता, अध्ययन आदि निबन्ध सामान्य विषयों पर लिखे गये निबन्ध हैं। मित्रता निबन्ध जीवनोपयोगी विषय पर लिखा गया उच्चकोटि का निबन्ध है जिसमें शुक्लजी की लेखन शैली गत विशेषतायें झलकती हैं। क्रोध निबन्ध में उन्होंने सामाजिक जीवन में क्रोध का क्या महत्व है, क्रोधी की मानसिकता–जैसै समबन्धित पहलुओं का विश्लेशण किया है।

२.३ *ऐतिहासिक ग्रन्थ*

हिंदी साहित्य का इतिहास उनका अनूठा ऐतिहासिक ग्रंथ है।

२.४ *अनूदित कृतियाँ*

शुक्ल की अनूदित कृतियाँ कई हैं। शशांक उनके द्वारा बंगला से अनुवादित उपन्यास है। इसके अतिरिक्त उन्होंने अंग्रेजी से विश्वप्रपंच, आदर्श जीवन, मेगस्थनीज का भारतवर्षीय वर्णन, कल्पना का

आनन्द आदि रचनाओं का अनुवाद किया। आनन्द कुमार शुक्ल द्वारा ''आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का अनुवाद कर्म'' नाम से रचित एक ग्रन्थ में उनके अनुवाद कार्यों का विस्तृत विवरण दिया गया है।

२.५ *सम्पादित कृतियाँ*

सम्पादित ग्रन्थों में हिंदी शब्दसागर, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भ्रमरगीत सार, सूर, तुलसी जायसी ग्रंथावली उल्लेखनीय हैं।

२.६ *शुक्ल के गद्य–साहित्य की भाषा खड़ी बोली है और उसके प्रायः दो रूप मिलते हैं*

गंभीर विषयों के वर्णन तथा आलोचनात्मक निबंधों में भाषा का क्लिष्ट रूप मिलता है। विषय की गंभीरता के कारण ऐसा होना स्वाभाविक भी है। गंभीर विषयों को व्यक्त करने के लिए जिस संयम और शक्ति की आवश्यकता होती है, वह पूर्णतः विद्यमान है। अतः इस प्रकार को भाषा क्लिष्ट और जटिल होते हुए भी स्पष्ट है। उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है।

भाषा का सरल और व्यवहारिक रूप शुक्ल जी के मनोवैज्ञानिक निबंधों में मिलता है। इसमें हिंदी के प्रचलित शब्दों को ही अधिक ग्रहण किया गया है यथा स्थान उर्दू और अंग्रेजी के अतिप्रचलित शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। भाषा को अधिक सरल और व्यवहारिक बनाने के लिए शुक्ल ने तड़क–भड़क अटकल–पच्चू आदि ग्रामीण बोलचाल के शब्दों को भी अपनाया है। तथा नौ दिन चले अढ़ाई कोस, जिसकी लाठी उसकी भैंस, पेट फूलना, काटों पर चलना आदि कहावतों व मुहावरों का भी प्रयोग निस्संकोच होकर किया है।शुक्ल जी का दोनों प्रकार की भाषा पर पूर्ण अधिकार था। वह अत्यंत संभत, परिमार्जित, प्रौढ़ और व्याकरण की दृष्टि से पूर्ण निर्दोष है। उसमें रंचमात्र भी शिथिलता नहीं। शब्द मोतियों की भांति वाक्यों के सूत्र में गुंथे हुए हैं। एक भी शब्द निरर्थक नहीं, प्रत्येक शब्द का अपना पूर्ण महत्व है।

३. शैली

शुक्ल की शैली पर उनके व्यक्तित्व की पूरी–पूरी छाप है। यही कारण है कि प्रत्येक वाक्य पुकार कर कह देता है कि वह उनका है। सामान्य रूप से शुक्ल की शैली अत्यंत प्रौढ़ और मौलिक है। उसमें गागर में सागर पूर्ण रूप से विद्यमान है। शुक्ल की शैली के मुख्यतः तीन रूप हैं:

३. १ *आलोचनात्मक शैली*

शुक्ल ने अपने आलोचनात्मक निबंध इसी शैली में लिखे हैं। इस शैली की भाषा गंभीर है। उनमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है। वाक्य छोटे–छोटे, संयत और मार्मिक हैं। भावों की अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई है कि उनको समझने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती।

३.२ *गवेषणात्मक शैली*

इस शैली में शुक्ल ने नवीन खोजपूर्ण निबंधों की रचना की है। आलोचनात्मक शैली की अपेक्षा यह शैली अधिक गंभीर और दुरूह है। इसमें भाषा क्लिष्ट है। वाक्य बड़े–बड़े हैं और मुहावरों का नितान्त अभाव है।

३. ३ *भावात्मक शैली*

शुक्ल के मनोवैज्ञानिक निबंध भावात्मक शैली में लिखे गए हैं। यह शैली गद्य–काव्य का सा आनंद देती है। इस शैली की भाषा व्यवहारिक है। भावों की आवश्यकतानुसार छोटे और बड़े दोनों ही प्रकार के वाक्यों को अपनाया गया है। बहुत से वाक्य तो सूक्ति रूप में प्रयुक्त हुए हैं। जैसे – बैर क्रोध का अचार या मुरब्बा है। इनके अतिरिक्त शुक्ल जी के निबंधों में निगमन पद्धति, अलंकार योजना, तुकदार शब्द, हास्य–व्यंग्य, मूर्तिमत्ता आदि अन्य शैलीगत विशेषताएँ भी मिलती हैं।

४. साहित्य में स्थान

शुक्ल शायद हिन्दी के पहले समीक्षक हैं जिन्होंने वैविध्यपूर्ण जीवन के ताने बाने में गुंफित काव्य के गहरे और व्यापक लक्ष्यों का साक्षात्कार करने का वास्तविक प्रयत्न किया। उन्होंने 'भाव या रस' को काव्य की आत्मा माना है। पर उनके विचार से काव्य का अंतिम लक्ष्य आनन्द नहीं बल्कि विभिन्न भावों के परिष्कार, प्रसार और सामंजस्य द्वारा लोकमंगल की प्रतिष्ठा है। उनकी दृष्टि से महान् काव्य वह है जिससे जीवन की क्रियाशीलता उजागर हुई हो। इसे उन्होंने काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था कहा है। शुक्ल की समस्त मौलिक विचारणा लोकजीवन के मूर्त आदर्शों से प्रतिबद्ध है। 'हमारे हृदय का सीधा लगाव प्रकृति के गोचर रूपों से है' इसलिए कवि का सबसे पहला और आवश्यक काम 'बिंबग्रहण' या 'चित्रानुभव' कराना है। पूर्ण विंबग्रहण के लिए वर्ण्य वस्तु की 'परिस्थिति' का चित्रण भी अपेक्षित होता है। इस प्रकार शुक्ल जी काव्य द्वारा जीवन के समग्र बोध पर बल देते हैं। जीवन में और काव्य में किसी तरह की एकांगिता उन्हें अभीष्ट नहीं।

शुक्ल की स्थापनाएँ शास्त्रबद्ध उतनी नहीं हैं जितनी मौलिक। उन्होंने अपनी लोकभावना और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से काव्यशास्त्र का संस्कार किया। इस दृष्टि से वे आचार्य कोटि में आते हैं। काव्य में लोकमंगल की भावना शुक्ल जी की समीक्षा की शक्ति भी है और सीमा भी। उसकी शक्ति काव्यनिबद्ध जीवन के व्यावहारिक और व्यापक अर्थों के मार्मिक अनुसंधान में निहित है। पर उनकी आलोचना का पूर्वनिश्चित नैतिक केंद्र उनकी साहित्यिक मूल्यचेतना को कई अवसरों पर सीमित भी कर देता है उनकी मनोवैज्ञानिक दृष्टि आलोच्य कवि की मनोगति की पहचान में अद्वितीय है।

जायसी, सूर और तुलसी की समीक्षाओं द्वारा शुक्ल जी ने व्यावहारिक आलोचना का उच्च प्रतिमान प्रस्तुत किया। इनमें शुक्ल की काव्यमर्मज्ञता, जीवनविवेक, विद्वत्ता और विश्लेषणक्षमता का असाधारण प्रमाण मिलता है। काव्यगत संवेदनाओं की पहचान, उनके पारदर्शी विश्लेषण और यथातथ्य भाषा के द्वारा उन्हें पाठक तक संप्रेषित कर देने की उनमें अपूर्व सामर्थ्य है। इनके हिंदी साहित्य के इतिहास की समीक्षाओं में भी ये विशेषताएँ स्पष्ट हैं।

शुक्ल के मनोविकार सम्बंधी निबन्ध परिणत प्रज्ञा की उपज हैं। इनमें भावों का मनोवैज्ञानिक रूप स्पष्ट किया गया है तथा मानव जीवन में उनकी आवश्यकता, मूल्य और महत्व का निर्धारण हुआ है। भावों के अनुरूप ही मनुष्य का आचरण ढलता है – इस दृष्टि से शुक्ल जी ने उनकी सामाजिक अर्थवत्ता का मनोयोगपूर्वक अनुसंधान किया। उन्होंने मनोविकारों के निषेध का उपदेश देनेवालों पर जबर्दस्त आक्रमण किया और मनोवेगों के परिष्कार पर जोर दिया। ये निबंध व्यावहारिक दृष्टि से

पाठकों को अपने आपको और दूसरों को सही ढंग से समझने में मदद देते हैं तथा उन्हें सामाजिक दायित्व और मर्यादा का बोध कराते हैं। समाज का संगठन और उन्नयन करनेवाले आदर्शों में आस्था इन रचनाओं का मूल स्वर है। भावों को जीवन की परिचित स्थितियों से संबद्ध करके काव्य की दृष्टि से भी उनका प्रामाणिक निरूपण हुआ है।

अपने सर्वोत्तम रूप में शुक्ल का विवेचनात्मक गद्य पारदर्शी है। गहन विचारों को सुसंगत ढंग से स्पष्ट कर देने की उनमें असामान्य क्षमता है। उनके गद्य में आत्मविश्वासजन्य दृढ़ता की दीप्ति है। उसमें यथातथ्यता और संक्षिप्तता का विशिष्ट गुण पाया जाता है। शुक्ल की सूक्तियाँ अत्यंत अर्थगर्भा होती हैं। उनके विवेचनात्मक गद्य ने हिंदी गद्य पर व्यापक प्रभाव डाला ळें

शुक्ल जी का हिंदी साहित्य का इतिहास हिंदी का गौरवग्रंथ है। साहित्यिक प्रवृत्तियों के आधार पर किया गया कालविभाग, साहित्यिक धाराओं का सार्थक निरूपण तथा कवियों की विशेषताबोधक समीक्षा इसकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। शुक्ल जी की कविताओं में उनके प्रकृतिप्रेम और सावधान सामाजिक भावों द्वारा उनका देशानुराग व्यंजित है। इनके अनुवादग्रंथ भाषा पर इनके सहज आधिपत्य के साक्षी हैं।

इसके अतिरिक्त उनकी भाषा निबंध और समालोचनाओं में विशुद्ध साहित्यिक है कि कविता में ब्रज भाषा और हिन्दी का सम्मिश्रण है। चिंतामणि से आपकी भाषा का सुंदर उदाहरण है।यह भाषा उन स्थलों की है जहाँ पर लेखक अपनी पूर्व कही बात की व्याख्या करना चाहता है, जहाँ पर चिंतज आता है वहाँ भाषा और भी सारगर्भित और क्लिपट हो जाती है। आपके समीक्षात्मक निबंधों में भाषा संस्कृतनिष्ठ और पांडित्यपूर्ण हो जाती है। शुक्ल जी के निबन्धों का अध्ययन करने पर निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं—मौलिकता, परिमार्जित परिपाक शैली, भाषा की समाहार शक्ति, मस्तिष्क और हृदय का समन्वय, सुगठित विचार परम्परा, सशक्त अभिव्यक्ति, विषय की सम्बद्धता, विवेचना की निगमन—पद्धति, वैयक्तिकता की गहन छाप, हास्य व्यंग्य की छटा, वैज्ञानिक विवेचन।

(1) मौलिकता—शुक्ल जी की प्रतिभा तलस्पर्शी थी। वह प्रतिपाद्य विषय का विवेच्य प्रश्न की उसके मूल में ग्रहण करते थे। मूल तत्व को पकड़ने के पश्चात् वे धीरे—धीरे उसका विस्तार करते थे। किसी विषय का प्रतिपादन करते समय वे जो तर्क देते थे पहले उन पर पूरी तरह विचार करते थे। उनका प्रत्येक विचार तर्क की कसौटी पर अच्छी तरह कसा हुआ होता था। यही कारण है कि उनके निबन्धों में सर्वत्र उनकी मौलिक प्रतिभा के दर्शन होते हैं। यहाँ तक मनोविकार से सम्बन्धित निबन्धों के सृजन में आधुनिक पाश्चात्य मनोविज्ञान से प्रभावित हुए भी उनकी मौलिकता की रक्षा कर सके हैं। हो सकता है कि उन्होंने जिन मान्यताओं पर विचार किया हो वे पूर्व स्थापित हों पर इससे उनकी मौलिकता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, क्योंकि उन्होंने उन मान्यताओं को नवीन रूप प्रदान किया है।

(2) परिमार्जित परिपाक शैली—हिन्दी गद्य साहित्य को एक सर्वथा अनूठी, सर्वोत्कृष्ट शैली प्रदान करने का श्रेय शुक्ल जी की है। सुगुम्फित विचारों, सुगठित वाक्यों से युक्त उनकी शैली शुक्ल जी के विचारों की परिपक्वता से युक्त है। वैज्ञानिक विवेचना ने उनकी शैली की प्रौढ़ता में अभिवृद्धि की

है। सहज से सहज, जटिल से जटिल, सरस सरस, गूढ़ से गूढ़ विचारों का वहन करने में उनकी शैली पूर्ण समर्थ है। वस्तुतः एक अत्यन्त परिमार्जित, गम्भीर तथा सुगठित शैली के आदि प्रतिष्ठापक के रूप में शुक्ल जी का अपना विशेष महत्व है। यही कारण है कि बेकन का कथन ैजलसम ि जीम डंद' र्थात् 'शैली ही व्यक्ति है' उन पर पूरी तरह चरितार्थ होता है।

(3) भाषा की समाहार शक्ति–शुक्ल जी के निबन्धों की भाषा सदैव ही उनके हर प्रकार के विचारों अनुवर्तिनी के रूप में सामने आयी है। थोड़े से शब्दों में बहुत सी बात कहना शुक्ल जी की भाषा की बहुत बड़ी विशेषता है।उनकी शब्द–योजना इतनी पूर्ण तथा सुगठित रहती है कि एक भी शब्द का प्रयोग न तो अनावश्यक रहता है और न उसमें परिवर्तन ही किया जा सकता है। शब्दों की इतनी सतर्क तथा सार्थक योजना अन्यत्र दुर्लभ है। सूत्र रूप में लिखे गये वाक्य इनकी भाषा की एक और प्रमुख विशेषता है। ये सूत्रात्मक वाक्य 'गागर में सागर भरने' का कार्य करते हैं। भाषा की इस समाहार शक्ति का उदाहरण देखिए(प) 'ब्रह्म की व्यक्त सत्ता सतत क्रियमाण है।' (पप) 'धर्म की रसात्मक अनुभूति का नाम भक्ति है।' (पपप) 'यदि प्रेम स्वप्न है तो श्रद्धा जागरण है।'

(4) मस्तिष्क तथा हृदय का समन्वय–शुक्ल जी के निबन्धों में 'गम्भीरता' एक विशेष गुण है। इसका कारण यह है कि उनके अधिकतर निबन्ध चिन्तन प्रधान हैं जिनमें बुद्धि अपना मार्ग तय करती हुई आगे बढ़ती है। इसका अर्थ यह नहीं कि उनके निबन्ध बुद्धि के भार से बोझिल होकर सर्वथा जीरस, शुष्क हो गये हैं। बुद्धि के साथ भावना का भी मधुर पुट है जिसने उनके निबन्धों की गम्भीरता को एक संयत, शिष्ट सरसता प्रदान की है।

(5) सुगठित विचार परम्परा–विचारों की सुगठित परम्परा शुक्ल जी के निबन्धों की प्रमुख विशेषता है। मोती लड़ियों की भाँति विचार इस प्रकार एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं कि यदि एक भी शब्द इधर से उधर कर दिया जाए तो सम्पूर्ण विचार–शृंखला अस्त–व्यस्त हो जायेगी।

विचारों की इस क्रमबद्धता तथा सुगुम्फित परम्परा वाक्यों में पूर्वापर सम्बन्ध स्थापित करने में बहुत सहायक सिद्ध हुई है। वाक्यों के इस पूर्वापर सम्बन्ध में अर्थ–बोध में बहुत बड़ी स्पष्टता आ जाती है। इस प्रकार सुगठित विचार–परम्परा शुक्ल जी के निबन्धों की मुख्य विशेषता है जिसने उनके निबन्धों को हिन्दी साहित्य का गौरव बना दिया।

(6) सशक्त अभिव्यक्ति–तीव्र एवं गहन चिन्तन–मनन तथा गूढ विचारों के साथ यदि प्रतिपादन की सशक्त शैली न हो तो उन विचारों का पूर्ण प्रभाव नहीं पड़ जाता है। शुक्ल जी के निबन्धों की यही विशेषता है कि उनमें प्रतिपाद्य विषय का पूर्ण निरूपण होता है। शुक्ल जी एक सफल वकील की भाँति प्रतिपाद्य विषय के पक्ष तथा विपक्ष पर विचार कर लेते हैं। उस विषय के विपक्ष में कौन–से तर्क आ सकते हैं, उनका किस प्रकार खण्डन किया जा सकता है, इन सभी भावनाओं पर शुक्ल जी भली प्रकार विचार कर लेते हैं फिर अत्यन्त दृढ़, संयमित तथा निर्भीक शैली में अपना विचार रखते हैं।

(7) विषय की सम्बद्धता–विषय की सम्बद्धता शुक्ल जी के इन निबन्धों की एक अन्य प्रमुख विशेषता है। किसी विषय का प्रतिपादन करते समय शुक्ल जी मुख्य विचार को केन्द्र में रखकर आगे बढ़ते हैं तथा एक पल के लिए वह विचार उनकी पकड़ से नहीं छूटता है। उनके निबन्धों में अनावश्यक विषय के दर्शन नहीं मिलते हैं। हर विषय सन्दर्भ के अनुकूल ही होता है।

विषय का प्रतिपादन करते समय शुक्लजी प्रकरण के व्यर्थ विस्तार से बचते हैं। उनके निबन्धों में उन्हीं तथ्यों का समावेश रहता है जिनका मुख्य विषय से किसी–न–किसी रूप में सम्बन्ध रहता है।

(8) विवेचना की निगमन पद्धति–शुक्ल जी के निबन्धों की विवेचना की प्रमुख विशेषता निगमन पद्धति का प्रयोग है। इसमें शुक्ल जी सबसे पहले सूत्र प्रस्तुत करते हैं फिर उनका भाष्य तथा अन्त में सारांश। उनके विचारात्मक निबन्धों की गम्भीर विवेचना में यह पद्धति बहुत उपयोगी रही है।शुक्ल जी के निबन्ध विभिन्न अनुच्छेदों में बँटे होते हैं। प्रत्येक अनुच्छेद का प्रथम वाक्य एक सूत्र में होता है वस्तुतः वाक्य पूरे अनुच्छेद का निष्कर्ष होता है। यह सूत्र वाक्य दुर्बोध होता है। आगे के वाक्यों में इस वाक्य की विवेचना करते हैं और अन्त में सारांश देकर पूरे विषय को जो उस अनुच्छेद में प्रतिपादित है,स्पष्ट कर देते हैं। वस्तुतः शुक्ल जी की यह पद्धति अध्यापकोचित पद्धति है जो विषय को एकदम स्पष्ट कर देती है। उस निबन्ध को पढ़ने वाले पाठक मानो विद्यार्थी हैं जो सब कुछ हृदयंगम करते जाते हैं।

(9) वैयक्तिकता की गहन छाप–शुक्ल जी के निबन्धों में उनके व्यक्तित्व की गहरी छाप स्पष्ट है। गहन चिन्तन, तलस्पर्शी प्रतिभा, प्रखर आलोचना शक्ति, गूढ़ निबन्ध लेखन, सफल अध्यापन, विस्तृत अध्ययन, सरस, भावुकता आदि विशेषताओं से युक्त उनका व्यक्तित्व, उनके विषयों में पग–पग पर अपनी छाप छोड़ता चला है। विशिष्ट भाषा शैली से युक्त उनके निबन्धों का प्रत्येक शब्द जैसे कह रहा हो कि वह शुक्लजी की लेखनी से प्रसूत हैं। ,

(10) हास्य व्यंग्य की छटा– –कठिन मानसिक कार्य करते–करते जैसे कोई व्यक्ति थक जाता है और कुछ पलों का मनोविनोद चाहता है उसी प्रकार विषय का गम्भीरतापूर्वक प्रतिपादन करते–करते जैसे मानसिक श्रम के परिहार के लिए शुक्ल जी बीच–बीच में हास्य व्यंग्य की छटा बिखेरते चलते हैं। पर हास्य–व्यंग्य का यह रूप इतना संयमित होता है कि विषय की अपेक्षित गम्भीरता कभी कम नहीं होती है।दूसरी ओर शुक्लजी का प्रतिपक्ष के खण्डन का आवेश भी हास्य–व्यंग्य को अशिष्ट नहीं होने देता है। यह विशेषता शुक्ल जी के आश्चर्यजनक भाषाधिकार को स्पष्ट करती है। इस प्रकार वह जिस कुशलता के साथ हास्य व्यंग्य की दृष्टि करते चलते हैं यह देखने योग्य होती है। '' इसी ले अन्त प्रकृति में मनुष्यता को समय समय पर जागृति रहने के लिए कविता मनुष्य जाति के साथ लगी चली आ रही है और चलती चलेगी। जानवरों को इसकी जरूरत नहीं।'' कहना न होगा कि 'जानवर' शब्द द्वारा साहित्य–विरोधी व्यक्तियों पर ही मार्मिक व्यंग्य का प्रहार है।

(11) वैज्ञानिक विवेचन–शुक्ल जी की गद्य शैली की सबसे बड़ी विशेषता उसका वैज्ञानिक विवेचन है। इस शैली में कहीं भी यह प्रतीत नहीं होता है कि लेखक कलात्मक सौन्दर्य उपस्थित करने का बलात् प्रयास करता है।जिस प्रकार एक वैज्ञानिक किसी 'वस्तु' के विषय में अन्तिम निष्कर्ष निकालने के पहले उसके पक्ष तथा विपक्ष दोनों को भली–भाँति परख लेता है। अपने मत को तकों की कसौटी पर कस लेता है फिर आत्मविश्वास के साथ अपने निष्कर्ष को सामने रखता है, उसी प्रकार शुक्ल जी किसी विषय का निरूपण करते समय उसके पक्ष तथा विपक्ष दोनों का भली–भाँति अध्ययन करते हैं।

तर्कों के द्वारा उनका खण्डन–मण्डन करते हैं। फिर दृढ़ता के साथ विषय का प्रतिपादन एक वैज्ञानिक की भाँति क्रमबद्ध रूप में करते चले जाते हैं।यह वैज्ञानिक विवेचन उनके विचारात्मक निबन्धों में विशेष रूप से देखने को मिल जाता है। विशेष रूप से किसी कवि या लेखक के कार्यों का मूल्यांकन करते समय तो उनकी विवेचना ने पूर्ण वैज्ञानिकता ग्रहण कर ली है।आचार्य शुक्ल बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार थे। जिस क्षेत्र में भी कार्य किया उसपर उन्होंने अपनी अमिट छाप छोड़ी। आलोचना और निबंध के क्षेत्र में उनकी प्रतिष्ठा युगप्रवर्तक की है। काव्य में रहस्यवाद निबंध पर इन्हें हिन्दुस्तानी अकादमी से 500 रुपये का तथा चिंतामणि पर हिन्दी साहित्य सम्मलेन, प्रयाग द्वारा 1200 रुपये का मंगला प्रसाद पारितोषिक प्राप्त हुआ था।

५. अध्ययन पद्धति

यह आलेख मुख्य रूप से वर्णन एवं विश्लेषण पर आधारित है । साथ ही ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति के आधार पर विभिन्न संस्थाओं, कार्यालयों एवं पुस्तकालयों से तथ्यों का संकलन किया गया है । वर्तमान अध्ययन मुख्य रूप से द्वैतियक स्रोत पर ही आधारित है।

६. निष्कर्ष

आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी हिंदी विषय के उच्च कोटि के प्रसिद्ध लेखक थे। इसनका जन्म 1884 में उत्तर प्रदेश के अगोना ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम चन्द्रबली शुक्ल तथा माता का नाम विभाषी था। इन्होने अपने लेखों में बहुत ही साधारण भाषा का प्रयोग किया है। इनके अंदर कम शब्दों में कह जाने की कला थी। इसलिए ये लोगों को बहुत पसंद आये। इनकी मृत्यु 02 फरवरी 1941 में हुई थी।

सन्दर्भ

१. शुक्ल आचार्य रामचंद्र (2007) भ्रमर गीत सार, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
२. पाण्डेय भवदेव(2003) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : आलोचना के नये मानदण्ड, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
३. पाण्डेय सुधाकर(2000), आचार्यशुक्लः प्रतिनिधि निबन्ध, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।
४. शुक्ल आचार्य रामचन्द्र (2012) चिन्तामणि, लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली।